

## पात्र-परिचय

### पुरुष—

- १—सूत्रधार  
२—श्रीकृष्ण

नाटकक निर्देशक ।

यदुवंशी राजकुमार, नायक ।



### स्त्री—

- १—नटी  
२—राधा  
३—ललिता  
४—विशाखा  
५—(चन्द्रावली)  
६—व्रजनारीगण

सूत्रधारक पत्नी ।

नायिका, राजकुमारी ।

राधाक सखी, झगड़ा लगभोनिहारि ।

राधाक सखी, कृष्णक दूती ।

कृष्णक गुप्त प्रेयसी ।

रासलीला मे भाग लेनिहारि व्रजक

स्त्रीगण ।



# पञ्चमी-राग

—मल्ल

मल्ल—१

मल्ल—२

—मिल

मिल—१

मिल—२

मिल—३

मिल—४

(मिल—५)

मिल—६

म०म० हर्षनाथज्ञा-विरचितम्

माधवानन्दनाटकम्

अथ प्रथमोऽङ्कः

[नाम्नी गीति सं०—१]

जय जगज्जनी, जय-जगज्जनी, देह सुमति मृगपतिगमनी ॥१॥  
सरसिरुहासन विषवविनाशन, कारिणि मधुकैटभदमनी ।  
दितिसुतरञ्जन सुरगणगञ्जन महिषमहासूरवलदलनी ॥  
विभुवनतारिणि महिषविदारिणि, धूमरमयन-भसमकरनी ।  
चण्डमुण्डशिरस्खञ्जनकारिणि, उनमत-रक्तबीज-शमनी ॥  
अतिवल्लुम्भनिशुम्भविनाशिनि, निजजनसकल-विषदहरनी ।  
तुभ गुण निगम अगम चतुरानन, कहि न सकत कत सहस्रकणी ॥  
अमर-निशाचर दनुज मनुजशिर, चिकुरकलित जित रक्तमनी ।  
तुअ-पदयुगलसरोरुह मधुकर, हर्षनाथ कवि सरस भनी ॥१॥

पहिल अङ्क

[गीत सं०—१]

जगज्जनी—संसारक माय । मृगपति-गमनी—सिंहवाहिनी । सरसिरुहा-  
सन—कमलक आसन वाली । मधु-कैटभ-दमनी—मधु ओ कैटभ नामक राक्ष-  
सक नियन्त्रण करवाली । दितिसुत-रञ्जन—देवके प्रसन्न  
कएनिहार ओ देवताके दुर्गति कयनिहार जे महिषासुर तकरा  
सैन्य-सहित मारनिहारि ॥ धूमर=धूम सनक आलि स  
धनुरके भरम कयनिहारि । उनमत=उन्मत्त । निगम आगम=वेद ओ सन्ध-  
शास्त्र । चतुरानन=बहु । कत सहस्रकणी=कतको शेषनाग ॥ अमर-निशा-  
चर=देवता, राक्षस, देव ओ मनुष्यक मयिक केश भिड़ला सँ झोमित तथा  
लालमणिक घोभाके जितयबल । अहाँक दुनु चरणकमलक भोरा हर्षनाथकवि ॥



अपि च,

या देवी कुमुदेन्दुकाभिरुचिरा शुभ्राम्बरा शोभना,  
चन्द्रार्द्धाङ्गितमस्तकेन्दुवदना हंसाधिरुडा करेः ।  
वीणामक्षगुणं स्वाव्ययकलशं विद्यां वधानादराद्  
भक्तानन्दकरी सदा वितरतु श्रेयांसि सा शारदा ॥१॥

(नाम्नन्ते)

सूत्रधारः—अलमतिविस्तरेण । एषा खलु खण्डवलाङ्गुलकमलविवासरस्य  
महाराजशर्वासिंहात्मज-नेत्रेश्वरसिंहतनुजन्मनः श्री श्रीमदेकरदेश्वरसिंहदेवस्य  
गुणिजनोपासिता परिपत कस्याप्यभिनवरूपकस्य प्रयोगालोकनाय समुत्कृष्ट-  
तेव लक्ष्यते । तत्कतमेन रूपकेणाश्रोयस्थातव्यं, येनेतस्याः प्रसादपात्रतां गमि-

आओरो—

जे देवी कुमुदक फूल ओ चन्द्रमाक काभितक समान प्रकाशित छधि,  
उज्जर वस्त्र सै सुन्दरि छधि, आधा चन्द्र लागल माँबवाली, चन्द्रमाक  
समान मुँहवाली हंस पर चढ़लि छधि हाथ सै वीणा, रुद्राक्ष माला,  
अमृतपूर्ण घँल ओ विद्याके आधार सै रखने छधि ओ भक्तसभ के आन-  
न्दित कयनिहारि छधि में सरस्वती भगवती सतत कल्याण करतु ॥१॥

(नाम्नीक अन्त मे)

सूत्रधार—अधिक विस्तारक प्रयोजन नहि । ई खण्डवला-वंशरूपी कमलक सूर्य-  
स्वरूप, महाराज शर्वासिंहक पुत्र-नेत्रेश्वर सिंहक बालक श्रीमान् एक-  
रदेश्वर सिंहक गुणवानलोकनि सै सेवित सभा कोनो नवीन रूपकक  
(दृश्यकाव्यक) प्रयोग देखवाक हेतु उत्कृष्टित जकाँ देखि पड़ैछ । से  
कोन रूपक सै एतय उपस्थित होइ, जाहि सै एहि सभाक कृपापात्र  
होयब से नहि बुझैत छी । (फेर मोत पाड़वाक अभिनय कय) हमरा-  
लोकनिक लग 'सकराढी' वंश मे उत्पन्न—कवि ओ पण्डितक सगळी  
मे श्रेष्ठ श्रीहर्षनायकशर्माक द्वारा बनाओल समर्पित माधवानन्द  
नामक नवीन नाटक अछि, जाहि मे—रासलीला, प्रेम, गर्भ, मान,

व्यामीति नाध्यवस्यामि । (पुनः स्मृतिमभिनीय) अरित किलाहमासु सकराढी-  
कुलानन्दनेन कविपण्डितकुलतिलकेन श्रीहर्षनायकशर्मणा विरचय्य समर्पितं माधवा-  
नानन्द नाम नवीनं नाटकम् । यत्र खलु—

रासलीला - प्रेमसर्वमानानुषयविस्तरः ।

वर्णितोऽनुनयः पश्चात्काननक्रीडनं तथा ॥२॥

तदभिनयेनैषा रञ्जनीया । सरसाह्वयनिमित्तं गृहिणीमाह्वयामि तावत् ।  
(परिक्रम्य नेपथ्याभिमुखम् ) प्रिये ! इहानम्यताम् ।

नटी—(प्रविश्य) एसांमिह, आणवेहु अञ्जउत्तो । [एषाऽस्मि आज्ञापयतु  
आर्चपुत्रः ।]

सूत्र—प्रिये ! पश्य रमणीयतां शरत्तमपश्य । इह हि-

निमग्नमम्बरतलं विमलाः सरस्य

श्चञ्चलमृगाङ्गुलरचुम्बितदिङ्मुखानि ।

सम्कुलकैरववनीषु मनोहरासु

गुञ्जन्ति मञ्जु मधुपानरता मिलित्वा ॥३॥

तदेतन्निशामधिकृत्य सङ्गीतकमनुष्ठीयताम् ।

पश्चात्ताप, प्रार्थना आदिक विस्तार वर्णित भय, बाद मे बनकीड़ा  
सहो वर्णित अछि ॥२॥

तकरे अभिनय सै एहि सभाकेँ प्रसन्न करी । ताहि मे सहायताक  
हेतु घरवाली केँ तावत् बजबैत छी । (वृत्ति नैपथ्य विस) प्रिये ! एम्हर  
आउ ।

नटी—(प्रवेश कय) इमेह छी, आज्ञा देखू आर्चपुत्र ।

सूत्र—प्रिये ! देखू, शरद ऋतुक सुन्दरता । एतय तँ—

आकाश बिन्दु भेषक अछि, पोखरि स्वच्छ अछि लहराइत चन्द्रमाक  
किरण सै व्याप्त सकल दिशा अछि ओ फुलायल कुतुबिनीक सुन्दर वन  
मे मधु पीबा मे संलग्न श्रीरा मधुर गुञ्जन करैत अछि ॥३॥

तेँ एहि रातिक विषय लयकेँ संगीत प्रस्तुत करू ।



नदी—जहा आनवेदि अजवउत्तो । [मथाऽऽज्ञापयति आर्यपुत्रः ।] (इति गायति ।)

[गीत सं०—२]

सुन्दर शरद समय सुखवासे ।  
सज्ज जलद गेल, विमल गगन भेल, शशिमण्डल अभिरामे ॥  
तेजि ककुभकामिनि निज दिनमणि अस्तशिखर चल गेला ।  
निरखि सुन घर, जनि रजनीकर, उपपति उपगत भेला ॥  
सफल तयनद्विचोर तिमिर जनि, हिमकर-दीप-तरासे ।  
सघन-विटपिदल-विषम-महीतल, गिरिकन्दर कर बासे ॥  
रविकर-कलित-वर्णित-कमलिनि तँह, कुमुद-पराजित भेला ।  
दिनकर-विरह निरखि निशि कुमुदिनि, तसु सम्पति हरि लेला ॥  
रजनि मलिन तलिनी तेजि मधुकर, कुमुदिनि अनुगत होई ।  
सम्पद सकल चराचर अनुचर, आपद बन्धु न कोई ॥  
निर्मल सरित शरदसमपोचित, कमिक पुलिन दरगावे ।  
लाज अधीन मचीन युवति जनि, लघु लघु जघन देखावे ॥

नदी—जैसा भाना देवि आर्यपुत्र । (गर्बित छवि) :—

[गीत सं०—२]

सज्ज जलद = पानिभरल मेष । अभिरामे = सुन्दर । ककुभ-कामिनि = विशाखपी नायिका । दिवमणि = सूर्य । रजनीकर = चन्द्रमा । उप-पति = परपुरुष । उपगत = उपस्थित ॥ तयन द्विचोर तिमिर = आँखि प्रकाशके चोरओतिहार अन्धकार । हिमकर-दीप-तरासे = चन्द्रमाखपी दीपक प्रकाशक डरे । सघन विटपिदल = गहन वन सौ भयानक पृथ्वी पर ओ पर्वतक कन्दरा मे ॥ रविकर-कलित = सूर्यक किरण सौ क्षोभित एवं घेरल कमलिनी सौ कुमुदक फूल हारि गेल । दिनकर-विरह = राति मे (कमलिनीके) सूर्यक विरह मे देखि । तसु = ओकर (कमलिनीक) । रजनि मलिन = राति मे मोलायल । तलिनी

मलय पवन बहु, चित नहि थिर रह, परिहर मानिनि माने ।  
एकरदेवसरसिह कुम्भधि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥  
सूत्र—प्रिये ! रमणीय खनु गीतम् ।

( नेपथ्ये दोहा—१ )

बन्धुजीव नथमल्लिका, केतकि कुमुदिनि कुन्द ।

चन्द्रकला मधुपान करि गुञ्जन मत्तमिलिन्द<sup>१</sup> ॥

सूत्र—(आकण्ठ) इय खलु व्रजकामिनीभिरसह रासक्रीडाप्रसक्तस्य मुरली नाद-यतः श्रीकृष्णस्य प्रावेशिकी दोहा गीयते । तदेहि आवागम्यनन्तरक-रणोपाय सज्जीभवावः । इति निष्क्रान्ती) ।

॥ इति प्रस्तावना ॥

= कमलिनीके<sup>१</sup> । मधुकर = भौरा । कुमुदिनि अनुगत = कुमुदिनीक पाछे लागल । सम्पद = सम्पत्तिनाल मे । सकल चराचर अनुचर = सब स्थावर ओ जङ्गम सेवक होइछ । सरित = नदी । कमिक पुलिन = कमलः अपन तट ॥

सूत्र—प्रिये ! बड़ दीव गाओल ।

[नेपथ्य मे दोहा—] मधुरी, बैली, केओला, कुमुदिनी, कुन्द ओ चन्द्रकला फूलक पराग पीबि मत्त भौरा गुञ्जन करैछ ॥

सूत्र—(आकानि) ई तँ व्रजक नायिका सभक संग रासलीला मे लागल मुरली सजबैत श्रीकृष्णक प्रवेश करवाक दोहा गाओल जाइछ । तँ आउ हमरो दुह गोठय अग्रिम कार्य हेतु तैपार होइ ।

[दुह बहार भय गेलाह ।]

[इति प्रस्तावना]

१-वक्ष्यमाणचन्द्रायलीकृष्णसङ्गमसूचकत्वादेवत् पताकास्थानकम्, “प्रस्तु-तागन्तुभावस्य वास्तुनोऽभ्योक्तिमुचनं पताकास्थानकम्” इति दशरूपोक्त-लक्षणात् ।



(सतः प्रविशति ययानिदिष्टः श्रीकृष्णो व्रजकामिन्यस्य)

गीत सं०—२

आनन्द नन्दकिशोर, आज व्रज रास रचो ॥  
केतकि कुन्द मुकुट परिमल लय, मलय-पवन बह धीर ।  
पूरन चन्द किरण चकमक कर, विकसित कुञ्ज कुटीर ॥  
अलक विरचि सिर सिन्दुर, लोचन, कज्जल, उर विच हार ।  
घरघर सज्जो निकसलि व्रजवनिता, तूपुर कर भक्तकार ॥  
पिककूजित अलिगुञ्जित भूषण, सिञ्जित चौदश पुर ।  
गावय गीत मधुर धुनि सखिमण, जनम ताप कर दूर ॥  
बंशो अघर, मुकुट शिर, कछनी, कटि, तनु ललित त्रिभङ्ग ।  
नटवर भेष किये यदुतन्दन, विहरत राधा सङ्ग ॥  
जप तप नियम करत कत मुनिजन, जेहि पद दरशन काज ।  
हर्षनाथ भन तसु भोपीजन, सहज दरश कर आज ॥

राधा—(सर्वतो विलोक्य संस्कृतमाश्रित्य) कथम्, प्रभातप्राया रजनी । इह हि—

[सखन पूर्वक निर्देशानुरूप श्रीकृष्ण ओ व्रजक कामिनीयस प्रवेश करैत छथि ।]

[गीत सं०—२]

परिमल = सुसम्पन्न । कुञ्जकुटीर = लतागृह सँ कमल कुटी । अलक  
विरचि = केश सजाय । उर विच = छातीक मध्य मे । व्रजवासिनी नारी ॥ पिक-कूजित = कोइलीक कृशुकब । अलिगुञ्जित  
= भोराक गुन्गुनायब । भूषणशिञ्जित = गहनाक सनसनायब ।  
पुर = भरैत अछि । जनम ताप = जन्मजन्मक दुख ॥ अघर = डोर  
पर । कछनी कटि = टाँर मे लघुवस्त्र । त्रिभङ्ग = त्रिवली (पेटक  
तीन थेंबी) ॥

राधा—(सब दिस देखि संस्कृतक आश्रय लय) की भोरकवा राति भय गेल ।  
एहिठाम तँ—

दृष्ट्वा रासमहोत्सवं निशि शशी ताराभिरस्यावरा-  
भूतं जागरणेन सम्प्रति दृढं खिन्नः परिभ्रमयति ।  
एषा कैरविणी शुभाऽनुहरते म्लानि शुभांशोरसती  
दृष्ट्वा म्लानमरिग्रजं सरसिजवातरसमुज्ज्वभते ॥४॥

श्रीकृष्ण—अहम् पुनरेवमुत्प्रेक्षे—

कान्ते ! त्वन्मुखमण्डलेन विजितः क्षीणाभिमानश्शशी  
नूनम्भजति वारिधावनुगतिं कुर्वन्ति तस्य प्रियाः ।  
ताराससम्भिदं विलोक्य कुमुदैस्तद्वन्धुभिः खिद्यते  
दृष्ट्वा वैरिधिपतिमम्बुजकुलं हृष्टं समुज्ज्वभते ॥५॥

भवतु, सम्प्रति प्रातस्समयोचितकर्मानुष्ठानाय सर्वैरेवास्माभिर्गन्त-  
व्यम् ।

राति मे रासमहोत्सव के अत्यन्त आदर सँ तारासमक संग  
देखिके चन्द्रमा अगरना सँ एखन खिन्न भेल अत्यन्त मलिन भय रहल  
छथि । ई कुमुदिनी चन्द्रमाक मनी नायिका बुढा सेहो मलिनता प्राप्त  
कय रहल अछि । शत्रुदल के मलिन देखि कमलक समूह विकसित  
भय रहल अछि ॥४॥

श्रीकृष्ण—आ हमतँ एहन सम्भावना करैत छी—

प्रिये ! अहाँक मुखमण्डल सँ जितल गेल क्षीण अभिमानबला  
चन्द्रमा निश्चित समुद्र मे डूबि रहल छथि ओ हुनक प्रियालोकनि  
(तारा) हुनक अनुसरण करैत छथि—एहिदृश्य के देखि हुनक  
बन्धु कुमुदलोकनि खिन्न होइत छथि—शत्रुक विपत्तिके देखि  
कमल सभ प्रसन्न भय विकसित होइत छथि ॥५॥

बेस, एखन प्रातःकालक उचित कार्य करवाक लेल हमरा सबहि  
बलैत चली ।



व्रजकामिन्यः—तहा [तथा] ।

(इति निष्क्रान्तरसंघे)

॥ इति प्रथमोऽङ्कः ॥

## अथ द्वितीयोऽङ्कः

[ततः प्रविशति श्रीकृष्णप्रेमखविता राधा, ललिता च]

राधा—

[गीत सं०—४]

कि कहूँ अपन सोहागे व्रजनन्दन वर पाओल भागे ॥  
पुरुष पुजल हरवामा से मोर पुरल सकल मनकामा ॥  
सकल कला परबीना, रहसि सदा पहु मोर अधीना ॥  
पलक न छाड़ि सज्जे, कबहु करसि नहि मोर मनभज्जे ॥  
प्रेम विनति कत बेरी, करइत ठाढ़ रहसि मुख हेरी ॥  
हर्षनाथ कवि भागे एकरदेशवरसिंह रस जाने ॥

व्रजलारीगण—बेस ।

[सभ बहार भय गेल ।]

॥ पहिल अङ्क समाप्त ॥

दोसर अङ्क

[तखन श्रीकृष्णक प्रेमसी गविता राधा ओ ललिता प्रवेश करैत छथि ।]

राधा—

[गीत सं०—४]

व्रजनन्दन वर = श्रीकृष्णके वरक रूप मे । हरवामा = महादेयक  
मुन्दीरी (गौरी) । कला-परबीना = सभ कला मे प्रवीण (कुशल) ॥

(दोहा)-२

करसि यशोदानन्द मम, प्राण अधिक सम्मान ।  
मम सहचरि गोपालि जन, दासीजन सम जान ॥

ललिता—

(दोहा)-३, ४

अचरज लागय मोहि सखि वृथा गरब तुअ देखि ।  
वचनप्रीत हरि तोहि कर परजन प्रेम विसेखि ॥  
रास-समय चन्द्रावली, लोचन भाव जनाय ।  
तुअ छल करि सखि ! घाम तमु गमन कयल यदुबाय ॥

[गीत सं० - ५]

सखि हे ! अपरूप माधव-रीति ।  
वचन अधिक तुअ प्रीति जनाबधि, अन्तर आनक प्रीति ॥  
आज रमस रम, गेलहुँ काजवश, तुअ प्रियसहचरि-गेह ।  
देखल नयन भरि, सुनह यत्न धरि हरि-चन्द्रावलि नेह ॥  
तुअ छल करि हरि, गेलाहु कोनहु परि, सक समय तमु घाम ।  
चरण पखारि नारि अङ्गुल भरि शयन बैसाओल स्थाम ॥

ललिता—

[दोहा]

वृथा गरब = व्यर्थक गर्व । वचनप्रीति = बाले टा सँ प्रेम । पर-  
जन-प्रेम = आनक संग प्रेम कय । रास-समय = रासक्रीड़ाक काल  
मे । चन्द्रावली = कृष्णक एक प्रेयसी । लोचन = आँखि सँ । छल करि  
—लाय कय । घाम तमु = ओकर घर । यदुबाय = श्रीकृष्ण ॥

[गीत सं०—५]

अपरूप = अद्वैत । अन्तर = हृदय मे । रमस रस = उत्तम भय ।  
प्रियसहचरि-गेह = प्रियसखीक (चन्द्रावलीक) घर । अङ्गुल भरि = भरि  
पाँज के । शयन = ओछान पर । स्थाम = कृष्णके । मुदित = आन-



दुअओ दुहुक गुन - मान करय पुन, मगन परस्पर प्रेम ।  
कामुक कामिनि, परम मुदित जनि निर्धन पाओल हेम ॥  
अवहु बुझिअ धनि, कपट प्रेम हुनि, करिअ हृदय अवधान ।  
एकरदेखरसिह बुझधि रस, हर्षनाथरवि भान ॥

अपि च, [गीत सं०-६]

सुन्दर शरद समय भल सजनी, चकमक चाननि राति ।  
रचल सुरत नव कामिनि सजनी, मदन मनोरथ माति ॥  
अधर सुधारस पीउल सजनी, कपट सुतल पहु हेरि ।  
बिहसि उठल पहु से देखि सजनी, लाज बदन लेल फेरि ॥  
निअ - कर वसन दूर करि सजनी अभरन सकल उतारि ।  
कुचयुग परसि बिहसि पहु सजनी, पिउल अधर अवधारि ॥  
निअ-कर गहि अङ्कुमभरि सजनी, शयन सोआओल नाह ।  
यामिनि-जलद नेहवश सजनी, करय देह एक चाह ॥  
नखक्षत-भरल पयोधर सजनी, निरखि एहन होअ भान ।  
कनकलता पर गिरियुग सजनी, ततय उमल दण चान ।  
हर्षनाथ कविशेखर सजनी, रसमय मन दय भान ।  
एकरदेखरसिह रस सजनी, भावक सरस सुजान ॥

निदित । निर्धन = मरीब आदमी जेना सोन पओने हो । अवधान = विचार, ज्ञान ॥

आओरो, [गीत सं०-६]

मदन-मनोरथ मति = कामवासनाक अभिलाषा मे मत्त भय । अधर  
सुधारस = डोर रूपी अमृतक रस । निअ-कर वसन = अपना हाथ  
बन्ध के । अभरन = गहना । नाह = नाथ (प्रियतम) । यामिनि-जलद  
= बरसातक राति मे । नखक्षत-भरल पयोधर = नहक चिह्न है युक्त  
स्तन । कनकलता = सोनाक लत्तो (नायिका मे) । गिरियुग = दू टा पर्वत  
(स्तन) । दण चान = दस टा चन्द्रमा, दसो टा नहक दस चिह्न ॥

अपि च, [गीत सं०-७]

सुखण त्रयस मदमातलि सजनी, सरस मदन-वश नाहि ।  
रचल रसिक-सङ्ग मन दय सजनी रसि विपरीत विचारि ॥  
ललित युगल कुच ऊपर सजनी, तनु-लतिका सञ्चार ।  
मेह युगल लय धिर भय सजनी, दामिनि रचल विहार ॥  
नाह बदन चञ्चल धमि सजनी, पिउल अधर अतिमन्द ।  
जनि पङ्कज बञ्चन नरि सजनी, बन्धुजीव पिव चन्द ॥  
फूल-चिकुर कलित मुख सजनी, स्वेदविन्दु लस ताहि ।  
पूजल मोतिनिकर जनि सजनी जलधर शशि अवगहि ॥  
सुरत समापि लाजवश सजनी, हसलि नाहमुख हेरि ।  
जनि कुचभर खेदित पहु सजनी, सिचति सुधारस डेरि ॥  
हर्षनाथ कविशेखर सजनी, रसमय मन दय भान ।  
एकरदेखरसिह रस सजनी, भावक सरस सुजान ॥

राधा—(नवेदम्) सहि सक्च एद । मएवि रासोसरे तस्स तारिसी  
लोअण-वावारी दिट्ठो । ता सब्ब सम्भावीअइ । अशो बरं

आओरो, [गीत सं०-७]

मदन-वश = कामक अधीन । तनु-लतिका = देहलता । मेह युगल =  
दुइ सुखे पर्वत । दामिनि = विजलोका । विहार = शीङ्गा । नाह =  
नाथ (प्रेमी) । बदन = नायिकाक मुँहके । अधर = डोर । पङ्कज  
बञ्चन = कमलके ठाँक के । नरि = नदी मे । बन्धुजीव = मधुरीक  
फूल । चिकुर = केव ही । कलित = शोभित । स्वेदविन्दु = घायक  
विन्दु । लस = शोभित । मोति-निकर = मोतीक समूह ही । जलधर =  
धैर्य ही । शशि = चन्द्रमाके । अवगहि = नहामा । समापि = समाप्त  
कय । कुचभर-खेदित = स्तनक भार ही याकल । पहु = पतिके ।  
सिचति = नायिका छिटैत अछि । सुधारस = अमृतक रस ।

राधा—(हुषी होइत) सखि ! ई सत्ये धिक । हमहुँ रासक अबसर पर हुनक



मालतीवाटिकां गदुअ जहा तहा अप्पणं विलोण्णेमि ।  
[ सखि मत्स्यम् इवम् । मयाऽपि रासावसरे तस्य तादृशी लोचनव्यापारो  
दृष्टः । तत् सर्वं सम्भाव्यते । अतः परं मालतीवाटिकां गत्वा आत्मानं  
विनोदयामि । ]

(इति निष्क्रान्ते ।)

इति द्वितीयोऽङ्कः

## अथ तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—अद्य श्रुतमया यत्किञ्च ललितामुलाञ्चलावलीभवनगमनवृत्ताभूतं  
श्रुत्वा प्रकुपिता मत्प्राणाधिका राधिका परिश्रुतसकलालङ्कारा  
मालतीवाटिकायां तिष्ठति । तदचिरमेवेनामुपसृत्य प्रसादयि-  
ष्यामि । (सर्वतः परिक्रम्य) इवम् मालतीवाटिका । तदत्र प्रविश्य

ओहते आँखिक चेष्टा देखलहुँ । तेँ सबकिछुँ सम्भव अछि । !  
एकर बाद मालती-वाटिका जाय जेना तेना मनकेँ बहलावी ।

[ दुहुँ बाहर भेडौहि । ]

॥ द्वितीय अङ्क समाप्त ॥

तेसर अङ्क

[ श्रीकृष्ण प्रवेश करै छथि । ]

श्रीकृष्ण—आइ हम सुनल अछि जे ललिताक मुँह सँ चन्द्रावली-भवन जयबाक  
घटना सुनि अत्यन्त तमसायल हमरा प्राणहुँ सँ अधिक प्रिया राधिका  
गहना-गुरिया त्यागि मालती-वाटिका मे छथि । त जल्दीये हुनक लग  
जाय प्रसन्न करब । (सब दिस टहलि) ई मालती-वाटिका थिक, त

लतान्तरितो भूत्वा तस्या रहस्यसम्भाषणं शृणोमि (इति तथा  
करोति) ।

(ततः प्रविशति तस्या ललितया सह यथानिदिष्टा राधा)

राधा—

[ गीत सं-५ ]

सखि है बुकल हरिक अनुरागे ।  
मधुमय वचन भरम हम पड़लहुँ कि कहव अपन अभागे ॥  
सुरतखीज उसर हम फेकल, रोदन निजंन-मेहा ।  
बधिर कान मृदुमान कयल जनि, कयल गोपशिशु नेहा ॥  
सज्जन बाप, ताप रखनीकर, बायस चुचिता रीति ।  
फणिकुल सहन, तपन कर शीतल, दुर्जन होअ स प्रीति ॥  
दुर्जन-मेह, रेह सौदामिनि, सँकत-सेतु समाने ।  
कोटि जतन कह तइअओ न धिर रह, ई जग के नहि जाने ॥

एतय प्रवेश कय ललीक अइ भय हुनक एकान्त भाषण सुनेत छी ।  
(तहिना करै छथि ।)

[ तखन सखी ललिताक संग पूर्ववर्णिता राधा प्रवेश करै छथि । ]

राधा—

[ गीत सं-६ ]

मधुमय वचन-भरम = मधु सँ भरल वचनक भ्रम मे । सुरतखीज =  
कलावशक बीया केँ उसर = (ऊपर) उस्सर भूमि मे, रोदन = कानल ।  
निजंन मेहा = बिनु लोकक घर मे । बधिर कान = बहीरक कान मे  
कोमल गीत याओल । गोप-शिशु नेहा = गोभारक बच्चा सँ (कृष्णसँ)  
रेह कयल ॥ सज्जन बाप = सज्जन केँ अहङ्कार । ताप रखनीकर  
= चन्द्रमाकेँ गर्मी । बायस चुचिता रीति = कौआकेँ पवित्रताक हंगामा  
फणिकुल सहन = राप केँ सहनशीलता । तपन कर शीतल = सूर्यक  
किरण ठंढा । दुर्जन = दुष्ट व्यक्ति केँ रेह नहि होइछ । दुर्जन नेह



सपनहु कबहु पावहु नहि मानव, हुनक वचन परमाने ।  
एकरदेवरसिह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥

ललिता सहि ! युत्तं खु हरे । [सखि ! युक्त सखिदम् ।]

श्रीकृष्ण—(श्रुत्वा स्वगतम्) सरयमिय कोषवशांता प्रेयसी । तदेनां यथा-

तथा प्रसादयामि । (इत्युपसृत्य) कुशलम्भवत्वा ?

राधा—(मौनमवलम्ब्य) धोमुखी तिष्ठति । )

श्रीकृष्ण—केवमपूर्वा रीतिः । (इत्युक्त्वा राधाङ्कुरे गृह्णाति) ।

राधा—(करमाच्छिद्य, परावर्त्य मुखं, तिष्ठति) ।

श्रीकृष्ण—

(गीत सं—६)

विशुन-वचन मुनि, रोष करहु धनि, की मोर भेल अपराधे ।  
तुअ विपरीत मनहुं नहि चिन्तल, प्रेम करहु किए बाधे ॥  
मानिनि !

= बुर्जितक रनेह । रेह सीदामिनि = विजलाका रेखा । सेहत-सेनु =  
वातुक बांध । समाने = ई सभ तुल्ये होइछ । कोटि जतन = करोड़ो  
प्रयास ॥

ललिता—सखी ! से ठीके ।

श्रीकृष्ण—(मुनि स्वगत) सरये ई कोषक अधोन छथि प्रिया । तं हितका जेना  
तेना प्रसन्न करी । (लग जाय) अहाँ निके छी ?

राधा—(बुझी लाधि नीचां मुहे रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—ई कोन अद्भुत डंग कयल अछि ? (ई कहि राधाक हाथ बरैत  
छथि ।)

राधा—(हाथ छोड़ाय, मुँह केरि डाढ़ि रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—

[गीत सं—६]

विशुन-वचन = चुमिलाक बात । रोष = तामसे । विपरीत = विरुद्ध ।

मलय-समीर बहय पिक कुहकय, पसरय कुसुम सवासे ।

चमकल चाननि रसमय यामिनि, ततय मान उपहासे ॥

जत अछि जगत विदित वनितागुण, गुअ तनु सकल निवासे ।

समुचित सवय हृदय करि सुन्दरि, पूरिअ याचक आसे ॥

सुन्दरि ! नयन निहारि दूर कइ, लोचन - नयन - निखासे ।

जओ पुन कण्ठक लागु चरणमह, कण्ठक तह होअ कासे ॥

करिअ बिनति कलजोड़ि मानवति ! परिहइ असमय - माने ।

एकरदेवरसिह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥०॥

अपि च,

[गीत सं—१०]

सुन्दरि ! अयलहुं तुअ गुण जानि ।

न करिअ गुनमति ! प्रेमक हानि ॥

सकलशरीर कुसुमसम सीर ।

साहि उचित नहि हृदय कठोर ॥

बिन कारण तुअ अपजय रोष ।

हम कि कहब मोर करमक दोष ॥

न करिअ सुन्दरि ! वदन मलान ।

हेरइत होअ मोर विकल परान ॥

मलय-समीर = मलयाचलक वसात । पिक = कोइली । कुसुम-सवासे

= फूलक सुगन्धि । चाननि = चाँदनी । यामिनि = राति । यत = जतेका

जगत विदित = संसार मे ख्यात । वनितागुण = नारीक गुण । याचक

आसे = मऊनिहारक आशा के । लोचन = आँखि सँ । नयन-निखासे =

आँखिक खुट्टी (आँखि मे गड़ल सूक्ष्म कण) के । कण्ठक = काँट

चरणमह = पायर मे । तह = सँ । परिहइ = छोड़ू ॥

आओइ

[गीत सं—१०]

कुसुम-सम = फूलक समान । करमक = पूर्वाकृत कर्मक (भाग्यक) ।

वदन मलान = मुँह मलिन । हेरइत = अहाँ दिख सकैत । भापि =



भाषिय सरस वचन करि हास ।  
 अनुगत जन अनि न कर निरास ॥  
 रसमय हर्षनाथ कवि भान ।  
 एकरदेश्वरसिंह रस जान ॥

राधा—(तथैव विमुखी तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—

दृष्टा यद्यसि माम्प्रति प्रियतमे विष्णुक्लृपाभ्यां करो  
 ताम्बुलेन रदच्छदावथ कुचौ हारेण हीनो पुनः ।  
 पादौ नृपुर्वमेवेन कुरुषे चित्रं नु ते चेष्टितं  
 कः कुर्यात्परसम्पदोऽनहरणं मुग्धे ! परस्मिन् क्वा ॥६॥

अपि च,

[गीत सं०—११]

रमनि हे ! सुनिअ वचन दय कान ।  
 जँओ मोर मानिअ सोन रोप करि कर छनि । दण्डविधान ॥  
 कुलिश समान बान करि लोचन दिहु करि भौंह कमान ।  
 करि समधान अचानक बेधिय न करिअ वदन मलान ॥

वाङ् । अनुगत जन = शरणागत व्यक्तिके ॥

राधा—(ओहिना मुँह फेरने रहित छथि) ।

श्रीकृष्ण—हे प्रियतमे ! जो तमसायलि हमरा पर छी तें दुनू हाथ केँ कयता सँ,  
 दुनू ओर केँ पान सँ, दुनू स्तन केँ हार सँ ओ दुनू पायर केँ नृपुंर  
 सँ हीन कियेक करैत छी ? ई अहाँक चेष्टा तँ आश्चर्यक अछि ।  
 हे मुग्धे ! अतका पर तमसायकेँ के आनक सम्पत्तिक हरण कय  
 सकैछ ? ॥६॥

आशोष,

[गीत सं०—११]

कुलिश-समान-वान = वज्रक समान बाण बनाव आँखिकेँ । दिहु =  
 स्थिर । भौंह-कमान = भौंहली धनुष पर । समधान = निशाना  
 दिवतर = विशेष सकल । पीन पयोधर गिरिवर = पुष्ट स्तन रूपी बुद्ध

विद्वतर पीन पयोधर गिरिवर युगल साधि रतिरङ्ग ।  
 बाहुपाश लय दिहु कय बान्हिअ, न कर वधा मनभङ्ग ॥  
 तुअ यदि रुचित विरोध कमलमुक्ति, होअओ, करिअ जनु देरि ।  
 चम्बन सरस विलोकन भाषण, बेहु पुरवकृत फेरि ॥  
 रसमय शरद समय सुखयामिनि, ततय उचित नहि मान ।  
 एकरदेश्वरसिंह सुलधि रस, हर्षनाथ कवि भान ॥

अपि च,

गीत सं०—१२

रमनि हे ! परल कओन मोर दोष ।  
 किए नहि नयन हेरिअ, नहि भाषिअ, किए मन उपजल रोष ॥  
 तुअ रुचि-विजित निरखि निजकामिनि, तुअ अनुचर मोहि जानि ।  
 कुपित मयन शर, हनय सुदिहु कर धवण अवधि धनु तानि ॥  
 रसमय शयन सरस नव कानन, सरस शरद निशि मोहि ।  
 लगइछ सकल बिरस अति हेरइत, अधर सुखायल सोहि ॥  
 मोर अपराध, अधर निज सुन्दर । कोप उपमतम स्वास ।  
 परसि तपाविअ, समुचित मानिअ अपरव कोप प्रकाश ॥

टा पहाड़ मे । साधि = लगाय, कसि । बाहुपाश = बाँहिक फानो ।  
 वधा = न्यर्थ ॥ रुचित विरोध = विरोध पतन्द अछि । पुरवकृत =  
 पूर्वा मे कयल चम्बनादि हमर धुराय दिअ । सुख-यामिनि = सुखदायी  
 राति ॥

आओरो,

[गीत सं०—१२]

रमनि = सुन्दरी । तुअ रुचि = अहाँक सुन्दरता सँ जीतलि अपन  
 कामिनी (पत्नी) केँ देखि ओ हमरा अहाँक सेवक जानि कामदेव  
 कुपित भय कान तक धनुष तानि केँ मजबूत हाथेँ बाण मारैत छथि ।  
 शयन = सुतब । कानन = वन । शरद-निशि = शरद ऋतुक राति ।  
 बिरस = रसहीन । अधर = ठोर । अधर = ठोर केँ । कोप उपमतम  
 स्वास = तामसे अत्यन्त गर्म स्वास क स्पष्ट सँ । तपाविअ = तप्त



तयन निहारि बचन एक भाषिअ, करिअ अघर रस दान ।  
एकरवेश्वरसिंह बुझयि रस, हर्षनाथ कवि भान ॥

अथ न,

गीत सं०—१३

कुमुदिनि । कछ निज बदन विकास ।

तुअ गुणनिकरनियन्त्रित मधुकर, अनुसर न कछ निरास ।  
दियस विगत बेल, रजनि उदय बेल, गगन निशाकर राज ।  
उमि गेल उहुगन, तदअओ न परसन, तुअ मुख सुनल आज ॥  
परिहृषि बेलि चुभेलि विषमदल, केतकि कुन्द मरन्द ।  
तुअ गुण गावय, धौदिस धावय, कतहु न रमय मिलिअ ॥  
सुन्दर कृप मरन्द मनोहर, जगभरि विदित सुवास ।  
करिअ सफल धनि, बुझिअ हृदय गुनि, पूरिअ मधुकर आस ॥  
परसनि भय मुख मोन तेआगिअ, कछ गुनमति । रस दान ।  
एकरवेश्वरसिंह बुझयि रस, हर्षनाथ कवि भान ॥

राधा—जुतं तुअ महुअरतण, जदो महुलोहेण यत्त तत्त्व भमसि ।  
अ पुणो मे कुमुदकितण, जदो न मे महुअरो अणुसरइ । [मुलं  
तव मधुकरवम्, यतो मधुल भेन यव तव भममि । न पुनमे कुमु-

करेत छी । समुचित = ताहि सौ ठीके बुझाइछ ।

आओरो,

[गीत सं०-१३]

तुअ गुण-निकर-नियन्त्रित = अहाँक गुण-समूह सौ बच मे आयल ।  
मधुकर = भौरा । अनुसर = अनुगामी अछि ॥ विगत = बितल ।  
रजनि = राति मे । निशाकर = चन्द्रमा । उहुगन = उदयगन । परसन =  
प्रसन्न । परिहृषि = छोड़ि । विषमदल-केतकि = असमान (काँटयुक्त)  
केओलाक फूल । मरन्द = पराग । धावय = पीड़ित । मिलिअ =  
भौरा । परसनि = प्रसन्न । मोन = चुप्पी । तेआगिअ = छोड़ ॥

राधा—अहाँकेँ, भौराक स्वभाव ठीक अछि, जे मधुक लोक सौ अतय ततय  
चुपैत छी । आ हमरा कुमुदिनीक स्वभाव नहि अछि कियेक तेँ भौरा

दिनीरत्वम्, यतो न मां मधुकरोऽनुसरति ।] (पुनस्सकोपं नेत्रे  
उन्मील्य,—

[गीत सं०—१४]

माधव ! ब्रजल तोहर मिनेहे ।

जाहि रमयि सङ्ग रहनि गमाओल, जाहु अचिर तम् गेहे ॥  
मधुमय वचन सुनत केँ माधव, छाडि देहु गुणगाने ।  
सुनिसुनि कपट चरित तु सुविदित, भरल दुअओ मोर काने ॥  
अमजल भरल सकल तन, लोचन जापर-रञ्जित लोभे ।  
सुखमय सायन सदन तसुँ चाह्य, जे तुअ मानस लोभे ॥  
प्रेमरङ्ग तुअ अङ्ग लपटि निज, भूषण छापल रामा ।  
तुअ तमु आज निरखि अवधारल, तसुँ भूषण अभिरामा ॥  
करिअ कृपा निज भवन गमन कछ, तुअ दरशन नहि भावे ।  
एकरवेश्वरसिंह बुझयि रस, हर्षनाथ कवि गावे ॥

(इत्थुन्धाय सहसा सह निष्क्रान्ता ।)

हमरा विस नहि अछीछ । (केर कोप महित आँखि खोलि)—

[गीत सं०-१४]

रमयि सङ्ग = रमणीक सङ्गे । रहनि = राति । अचिर = क्षीघ्र ।  
तसुँ गेहे = तकर घर । कपट-चरित = छल-युक्त अहाँक स्वभाव । सुवि-  
दित = हमरा नोक जकाँ बुझल अछि । अमजल-भरल = अम कयला  
पर पसेना सौ भरल । सवन तसुँ = ओहि नायिकाक घर मे । तुअ  
मानस लोभे = अहाँक मन मे लोभ अछि ॥ भूषण छापल रामा = ओ  
सुन्दरी अहाँक देह मे अपन गहनाक छाप दग बैलकी निरखि अवधा-  
रल = देखिकेँ बुझलहुँ । तसुँ भूषण = आकर गहना केहन सुन्दर  
छैत से ॥

(अडि सखी-संग अहार भय गेलि ।)



श्रीकृष्णः—(सर्वोत्तमव्ययम्) कथं हर्षव प्रकृतिता प्रियतमा । तदिकमथानुष्ठेयम् ?  
कथं वा धृतिं धारयामि ? को वा लोकोत्तरमशोषां तां विस्मृतं  
पारयति ? अहो शरीरशोभद्वये ! तदाहि—

[गीत सं०—१५]

किं बहुव्ययं नागरि रूपे ।

नीलवसनि धनि, जलदवलित जनि, विर-रहं सञ्चित-मरुपे ॥

राजित वदन मनोहर तारर, कुन्तल कुटिल विराजे ।

राहुदशनं हर तिमिर मुकाएल, जनि रजनीकर-राजे ॥

चललि रोमावलि भुजगि नाभिबिल, लोचन खञ्जन आसे ।

कुचकञ्चनानिर-निकट मुकाइलि, नासा-गण्ड तरासे ॥

तूपुर पञ्चराग-पदाञ्जलि ललित-नटन-भु-तिकञ्जे ।

श्रीकृष्ण—(विकलतापूर्वक) की चले से-हीह तमसावलि प्रियतमा ? त एतय  
की करी ? कोना कय धीय धरु ? अथवा के ओहि अलौकिक  
सुन्दरी के बिहरि सकैछ ? अहो शरीरक सुन्दरता । जेना कि—

[गीत सं०—१५]

नागरि-रूपे = चतुरा नायिकाक स्वरूप । नील-वसनि = नील रङ्गक  
कापड़ा पहिने । जलद-वलित = मेघ मे घोभित । सञ्चित = क्षिप्त  
लोका । राजित = सोभित । कुन्तल कुटिल = केय टेढ़ । राहुदशन =  
राहुग्रहक कटवाक (ग्रहण लगवाक) । तिमिर = अन्धकार मे । रजनी-  
कर = चन्द्रमा । रोमावलि भुजगि = रोहवाक पाँती रूपी साँपिन ।  
नाभि-बिल = दोही रूपी बिल से । लोचन-खञ्जन-आसे = आँखि रूपी  
खञ्जन-पक्षीके खववाक आना सी । कुच-कञ्चन-गिरि = स्तनरूपी  
शोनाक पर्वतक समीप । मुकाइलि = विलीन भेल । नासा-गण्ड तरासे  
= नाक रूपी गण्डक लोलक डरे ॥ पञ्चराग-पद-शिञ्जित = मणिक  
समान छाल पाएर मे भुनझुनाइछ । ललित-नटन-भु-तिकञ्जे = सुन्दर  
नचैत कर्णकूल । नयन-भेद = आँखिक भङ्गिमा । पुलक = आनन्द ।

नयनभेद कहुं पुलक अङ्गमह कनक विशेषक पुञ्जे ॥  
तम् तनु रचल मदन जनि रसमय, की रसलम्पट जाने ।  
अप-नग-निरस सजित रसावञ्चित, की बिह रचत अजाने ॥  
सुन्दर अघर मधुरिमद गञ्जय, कटि केहरि अभिमाने ।  
एकरदेखरमिह कृपति रत, हर्षनाथ कवि भाने ॥

मधनु, कर्तव्योद्देशानुनययत्नविशेषः (इति निष्क्रान्तः) ।

॥ इति तृतीयोऽङ्कः ॥

## अथ चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशति सप्तमधमा विशाखा)

विशाखा—अज ननु शिरीकण्डेण कलम्बललम्भि आहूयामि । एमो बल-  
म्बल्लखो ता एत्थ पविशामि [अथ खलु श्रीकृष्णेन कदम्बललमाहू-

अङ्गमह = देह मे । कनक = सोना । पुञ्जे = डेर ॥ मदन = काम-  
देव । की रसलम्पट = अथवा रस मे क्षिप्त । रसवञ्चित = रस-  
रहित अजानी विधाता कोना रचितथि ॥ अघर मधुरिमद गञ्जय =  
टोर मधुरी फूलक मद के गञ्जित करैछ । कटि केहरि अभिमाने =  
हार सिंहक अभिमान के गञ्जित करैछ ॥

बेस, पहिठाम प्रार्थना करवाक प्रयास सभ करक चाही ।

(बहाय भेलाह ।)

॥ तैसर अङ्क समाप्त ॥

चारिम अङ्क

[हरवडाइलि विशाखा प्रवेश करैछ ।]

विशाखा—आइ त श्रीकृष्ण कदम्ब तर बजबोने छथि । ई कदम्बक गच्छ



ताडस्मि । एष कदम्बवृक्षः । तदत्र श्रीकृष्णो भविष्यति । तस्मादन  
प्रविशामि ।] (इति प्रवेशमभिनयति ।)

(ततः प्रविशति चिन्तानिमग्नः श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—(दृष्ट्वा बह्वर्षमाश्रितो दत्त्वा) प्रियसखि विशाखे ! अद्यात्मीय कोप-  
कलुषितमात्मनः प्रवस्थाः प्रियसखी मामनादृश्य कदलीवाटिकां  
प्रस्थिता । तदत्रावलोक्य विधेयम् ।

अपि च— [गीत सं०—१६]

किं करव आज यत्न हम् रे, तेजि गेलि अजरामा ।  
सूखद-नेहू भेल तनि बिनु रे, दुखमय परिणामा ॥  
केतकि कुन्द कुमुदरस रे, परिमल लय धीरे ।  
बहुय मन्द मलयानिल रे, मोर दयह शरीरे ॥  
अलिकुल गान कान दह रे, शशिकर तनुतापे ।  
चन्दनपरस सुमरि पुन रे, मानस मोर कापे ।  
जेहि विधि होअ समागम रे, तमु करिअ ठपार्ई ।  
करिअ यत्न सखि मानिनि रे, मोहि देहु मनाई ॥

धिक । त एतय श्रीकृष्ण होयवे करताह । तें एतय प्रवेश करैत छी ।  
(प्रवेश क'वाअ अभिनय करैत छथि ।)

[तखन चिन्ता मे डूबल श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छथि ।]

श्रीकृष्ण—(क्षेप सहज आशीर्वाद दय) प्रियसखी विशाखा ! जाइ अरुणत  
तामस सँ मलिन मनवाली अहीन प्रियसखी हमर अनादर कय कर-  
जान मे चल गेलीह । से एहिठाम की करी से चिन्ता ।

आओरो—

[गीत सं०—१७]

यत्न = प्रयास । अजरामा = वज्रभूमिक सुन्दरी राधा । नेहू = स्नेह ।  
परिणामा = परिणाम फल । परिमल = सुगन्धि । बहुय = जखेछ ।  
अलिकुल = भोराक समूहक । कान दह = कानकेँ जरवैछ । शशिकर

हर्षनाथ कश्चिदस्तर रे, रसमय इहो भानै ।

एकरदेवदरसिह रस रे, बुझ गुणक निधाने ॥

विशाखा—(जहामइ-बोझवँ उवाअ करिस्सं । [यथाभतिवैभवम् उपाय  
करिष्यामि ।])

श्रीकृष्णः—तावदहं भाण्डीरनिवटं गच्छामि (इति निष्क्रान्तः ।)

विशाखा—(परिक्रम्य) इअं कअलोवाडिया । एतय पिअसही हुबिस्सदि ।  
ता एतय पविशामि हयं कदलीवाटिका । अथ प्रियसखी भविष्यति ।  
तदत्र प्रविशामि । (इति प्रवेशमभिनयति ।)

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णावधीरणानुत्पन्ना सख्या ललितया सह राधा)

राधा—सहि कअवहुबिणओ वि सिरीकण्हो मए ओहीरिखो त्तिअहो  
पमाओ ! कि एतय करणिज्जं । कहं पुणो वि समागमो हुबिस्सदि  
[सखि कृतबहुविनयोऽपि श्रीकृष्णो मयाऽवधीरित इत्यहो प्रमादः ।  
किमत्र करणीयम् ? कथं पुनरपि समागमो भविष्यति ?]  
(इत्यनुतापं करोति) ।

तनु तापे = चन्दमाक किरण देह मे ताप दैछ । चन्दन-परस = चाननक  
स्पर्शके । सुमरि = स्मरण कय । मानस = मन । मानिनि = मानवलीके ।

विशाखा—अपन बुद्धि-वैभवक अनुसार उपाय करब ।

श्रीकृष्ण—तावत् हम बड़क ग्राहक लग जाइत छी । (बहार भेलाह ।)

विशाखा—(टहलि) ई करणान धिक । एतय प्रियसखी होयतीह । त एतय  
प्रवेश करैत छी । (प्रवेशक अभिनय करैत छथि ।)

[तखन श्रीकृष्णक द्वारा अवहेलना सँ सन्तप्ता, सखी ललितया संग  
राधा प्रवेश करैत छथि ।]

राधा—सखी ! बहुत विनय कयनहुँ श्रीकृष्णक हम अवहेलना कयल—ई त  
बड़ गलती भेल ! आज की करी ? कोना फेर मिलन होयत ? (पछता-  
इत छथि ।)



विद्याया—इयं प्रियसखी किमपि मन्तेहि ता लतान्तरिता भविष्य इमाए  
रहस्यमन्तणं सुणामि । [इयं प्रियसखी किमपि मन्त्रयति । तत्  
लतान्तरिता भूत्वाऽस्या रहस्यमन्त्रणं शृणोमि ।] (इति तथा  
करोति ।)

[गीत सं०-१३]

राधा-सखि हे ! यत्न वयं कर मोर काजे ।  
कोनपरि आज देखव वजराजे ॥  
पीत-वसन तनु धन-अभिरामे ।  
लसय कनक जनि शालग्रामे ॥  
सुन्दर वदन नयन अभिरामे ।  
लेखय खड्गजन पङ्कजधामे ॥  
कनक मुकुट शिखिपुच्छ विराजे ।  
जनि कञ्चनमिश्रि सुरधनु राजे ॥  
राजित कर बिच मुरलि विशाला ।  
लसय कमल जनि पंकजनाला ॥

विद्याया—ई प्रियसखी किछ विचारेत छथि । त ललोक अक भय हिनक मुत्त  
परामर्श सुनैत छी । (तहिना करैत छथि ।)

राधा—

[गीत सं०-१३]

यत्न = प्रयास कय । वजराजे = श्रीकृष्णके । पीत-वसन = पीयर  
वस्त्र । तनु धन-अभिरामे = मेघ सन सुन्दर देख पर । लसय = गोभ्रंछ  
कनक = सोन । शालग्रामे = शालग्राम पाथर पर । सुन्दर वदन =  
सुन्दर मुँह पर । नयन अभिरामे = सुन्दर आँखि । पङ्कज धामे =  
कमलरूपी घर मे ॥ शिखिपुच्छ = मयूरक पंखि । कञ्चनमिश्रि =  
सोनाक पर्वत पर । सुरधनु = इन्द्रधनुष, पनिसोखा । राजे =  
शोभित ॥ राजित = शोभित । कर बिच = हाथक बीच मे । लसय

रसमय हर्षनाथ कवि गावे ।  
एकरदेखवरमिह बुझ भावे ॥

अपि च-

[गीत सं०-१४]

मुनु सखि ओरे कओन पुरितफल दुरमति, यदुपति,  
कयल अनादर निजमति ॥  
तनि मोहि ओरे, एक प्राण छल बुद्ध तन, सब सन,  
कयल भेद हम निज मन ॥  
विधिवश ओरे, यदि न मिलत मुरलीधर, यदुवर,  
हतव जीव कहि गिरिधर ॥  
उपधर ओरे, मोर अवगुन पहु बिसरयि, आवधि,  
दिन दिन नेह बढावधि ।  
रस बुझ ओरे, रसभावक जन मत दय, गुणमय,  
हर्षनाथ मन रसमय ॥

(इति विरति हस्त निघाय विरहवेदनाभिनयति) ।

ललिता—सहि ! समरससिद्धि । [सखि ! समापवसिद्धि ।]

राधा—(सखेदम्)—

कमल = कमलक फलक रंग शोभित होइछ । पङ्कज-नाला = कम-  
लक नाला ॥

आओरो,

[गीत सं०-१५]

पुरितफल-दुरमति = पापक फल बिक ई दुबुद्धि । यदुपति = कृष्णके ।  
निजमति = अपन बुद्धि सँ ॥ तन = देह ॥ विधिवश = संयोग सँ ।  
हतव जीव = प्राण त्यागैव ॥ उपधर = अपाय कर ॥

ललिता—सखी ! वैर्य घट्ट ।

राधा—(सखेद सहित) —



[गीत सं०-१६]

एकसरि कोन परि लेख, सरस सरदस्तु आज ।  
 मदन-दहन दह मोर तनु, कि करव पहु न समाज ॥  
 पीबि कुसुमरस हयित, गुञ्जत अलि दह कान ।  
 सजल नलिनदल चानन मोर तनु अनल समान ॥  
 दहओ जानि मोहि एकसरि, सोति-सहोदर चान ।  
 जगतप्राण नहि समुचित, तोहि मोर हरह वरान ॥  
 मनसिज मोर मन तापम, कि कहव परजन दोष ।  
 केअओ न तनु हित जगभरि, जाहि करय बिह रोष ॥  
 बुझत पराभव के मोर, के मोहि होएत सहाए ।  
 सकल जगत मोहि विपरित, कतहु न जियन-उपाए ॥  
 हर्षनाथ कविशेखर, रसमय मन दय गाव ।  
 गुणमय एकरदेवसिंह बुझ अभिनव भाव ॥

विशाखा—एदेण इमाए वञ्जोवणासेण तवकीअइ, उक्कण्डिता प्रियसखीति । ता सुलभं जेअ कउजति उवसप्पामि इमं [एतेन अस्म्य]

[गीत सं०-१७]

मदन-दहन=कामदेवरूपी आगि । दह मोर तनु=हमर देह के जर-  
 वंत अछि । पहु न समाज=पति समीप नहि छथि । कुसुमरस=  
 फूलक रसके । अलि=भोरा । सजल नलिनदल=चानि देल पुर-  
 इनिक पात वा फूलक पत्ती । अनल=आगि । दहओ=जरावओ ।  
 सोति-सहोदर=सौतिनिक (लक्ष्मीक) सोदर भाय । चान=चन्द्रमा ।  
 जगतप्राण=तेँ संसारक प्राणदाता कहाय हमर प्राण हरेत छह जे  
 उचित नहि बिकह ॥ मनसिज=कामदेवक । परजन=आनक । बिह  
 विधता ॥ पराभव=दुःख ॥

विशाखा—हिनक एहि वचन-विन्यास ही बुझि पड़ेछ जे प्रियसखी उत्कण्ठिता

वचनोपन्यासेन तत्पर्यंते उत्कण्ठिता प्रियसखीति । तत् सुलभं  
 नैव कार्यम् इत्युपसर्पाम्येनाम् । [इत्युपसर्पति] ।

राधा—(उद्देवा सोच्छ्वासम्) कहं प्रियसखी ? प्रियसहि ! एत्थ उक्कवि-  
 शदु भोदी [कथं प्रियसखी ? प्रियसखि ! अत्रोपश्रितु भवती ।]  
 [इत्युपवेसयति] ।

विशाखा—किणो उक्कविग्गाव लक्खीअइ भोदी ? [किमुहिनेव लक्ष्यते  
 भवती ?]

राधा—(मोहेणं) अप्पणो सहोअणे कि अक्कहणिअओ, ता मुणाहि ।  
 [आत्मना सखीजने किमकथनीयम्, तच्छृणु ।]

[गीत सं०-२०]

सुनिअ सुचेतनि सहचरि, कि कहव निज अविचार ।  
 कयल रोष-कलुषित मन, सुपहु अनादर भार ॥  
 बहुविधि विनति कयल पहु, समर रहति विनि गेल ।  
 कुलिश-कठोर हृदय मोर, तइओ न परसन भेल ॥

छथि । तखन त काज सुलभे अछि । तेँ हिनक लग जाइत छी ।  
 [लग जाइत छथि ।]

राधा—(देखि वैद्य सँस लेत) अए प्रियसखी ? प्रियसखी ! अहो एतय बेसु ।  
 [वैद्यवेत छथि ।]

विशाखा—विकल जकाँ किनेक लगैत छी अहो ?

राधा—(उद्देग सहित) अपन सखीक लग कोन बात नहि कहबा दोष्य अछि,  
 तेँ सुनु—

[गीत सं०-२०]

सुचेतनि=बुधियारि । कलुषित मन=मलिन मन ही ॥ बहुविधि=  
 बहुत तरहें । समर रहति=सम्पूर्ण राति । कुलिश-कठोर=वक्त्रक  
 समान कठोर हृदय । परसन=प्रमत्त ॥ ताहु=प्रियतम । अन्तर दाह  
 =हृदय में ज्वाला अछि ॥ सरस नाह-विरहानल=रसिक पतिक



हम उठि गेलहु रोप करि, मलिन वदन भेल नाह ।  
तइओ न घरि हम हेरल, से मोर अक्षर दाह ॥  
कि कह्य अपन मनोदुख, अपनहि बुझ अनुमानि ।  
सरस-माह विरहानल, के सहि सकय सेआनि ॥  
कि करत सज्जन-सङ्गति, सुमति नीति उपदेश ।  
विह विपरित मुनिजनहुक उपजय कुपति विशेष ॥  
केरि हम एहन करव नहि, कर सखि तेहन उपाए ।  
एक बेरि विनति करयि पहु, मोर गोरब रहि जाए ॥  
हृषीकेश कथिलेश्वर, रसमय मन बस गाव ।  
एकरदेखरसिह रस, भावक सरस सुभाव ॥

विशाखा—(आत्मगतम्) । सच्चं चेअं तत्किदं मए, सुलहं कज्जंति । (प्रका-  
शम्) सहि ! साहि, तुम विना सिरीकण्हो वि तुमं विरहवेअणां  
अणभविअ विविखलचित्तव्व ममई । तां सुलहं तुज्जं कज्जंति  
मल्लिआवणं गहुअ चिट्ठु भोदो । अहं वि सिरीकण्हं तत्थ आण-  
इम्हं । [सत्यं चेन्नत् तस्मिन् मया सुलभं कार्यमिति । सखि ! राधिके  
स्वर्ग, विना श्रीकृष्णोऽपि स्वमिव विरहवेदनामनुभूय विक्षिप्तचित्त  
इव भ्रमति । तत् सुलभं तव कार्यम्, इति मल्लिकावनं गत्वा  
तिष्ठतु भवती । अहमपि श्रीकृष्णं तज्ज्ञानयिष्यामि ॥]

[इति निष्काशाः सर्वाः]

इति चतुर्थोऽङ्कः

विद्योगक आनि के । सेआनि = चतुर नायिका ॥ विह-विपरित =  
जखन विधाता विारीत हूथि । कुपति = अथवाह विचार ॥

विशाखा—(मनहि मन) ई तैं सते हम तक कयने छलहुँ ओ काज सुलभ अछि।  
(प्रकाश) सखि राधिका ! भूहीत विना श्रीकृष्णो अहीँ जकी  
विरह-वेदनाक अनुभव कय विक्षिप्त मन सनक भेल चुनैत छथि ।  
तेँ सुलभ अहीँ काज अछि । से मल्लिकावन जाय अहीँ रहूँ ।  
हमहुँ श्रीकृष्णकेँ ओतय आनय ।

[सभ चहार भेल ।]

॥ चारिम अङ्क समाप्त भेल ॥

## अथ पञ्चमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति चिन्ताकुलः श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—(स्वगतं) कथमिवासीमपि नागता विशाखा ? किमत्र विलम्बका-  
रणम् ? किमु कोपयतेन यत्र कुवापि प्रस्थिता प्रियतमा न  
मिलिता ? कि वा बहुतरङ्गयेनाप्यनुनयशाङ्गीकरोति ? अथवा  
परचित्तानुनापातभिज्ञा विशाखा तदनुनययामे सिधिलादरेवास्ते ?  
किमत्र विवेकम् ? (पुनः सञ्जाता परिक्रम्य दृष्ट्वा सहर्षं) इयमा-  
गतेव ।

(ततः प्रविशति हृषीकेशकुलमानसा विशाखा)

विशाखा—कुशलं भवदो ? [कुशलं भवतः ?]

श्रीकृष्णः—विशेषतस्तवागमनेन । कथय कि साधितमभीप्सितम् ?

पञ्चम अङ्क

[चिन्ता ही व्याकुल श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छथि ।]

श्रीकृष्ण—(स्वगत) एखन घरि विशाखा कियेक नहि आयलि छथि ? एहिठाम  
विलम्बक की कारण । की तमसायकेँ जतय कतहु गेलि प्रियतमा  
नहि भेटलथिहु ? अथवा की बहुत पतनहुँ ही प्रार्थना केँ नहि  
स्वीकार करैत छथिन ? अथवा आनक मनक सन्ताप ही अपरि-  
चित विशाखा हुनक अनुनय करवा मे मन्द पड़ि गेलि अछि ? एहना  
मे की करी ? (फेर सभ दिस टहलि गेलि सहर्ष) इयेह आविसे  
गेलीहि ।

[तखन अनन्द ही उल्लास भाल मनवाली विशाखा प्रवेश करैत छथि ।]

विशाखा—आने कुशल श्री ?

श्रीकृष्ण—विशेष रूपेँ अहीँ आगमन ही । अह की उतर साधन कयल ?



विद्याया—अब ई ? [अथ किम् ?]

श्रीकृष्णः—विशेषण कथय ।

विद्याया—भवदोषि अहिभर उद्विगमहिअवा सुजसकिदे अह्माणं पिअसही राहिआ महिलभावणे विट्ठर । ता भक्ति आत्मासणीआ सा ।  
[भवतोऽप्यधिकतरम् उद्विगमह्यया त्वत्कृतेऽस्माकं प्रियमखी राधिका महिलकावने तिष्ठति । तज्जटित्वाश्वासनीया सा ।]

अपि च,

[गीत सं०—२४]

माधव ओ रे, कि कहव तमु अपख गति, गुनमति  
तुअ बिनु लागु विगतमति ।  
हिमकर ओ रे, निरखि कापि कह अम्बर, अन्तर,  
देख उगल निशि दिनकर ॥  
कहइछ ओ रे, परस पावि तनु करपूर, कह दूर  
कओन देख तनु विपचूर ॥

विद्याया—त आओर की ?

श्रीकृष्ण—विशेषण कहु ।

विद्याया—अहूँ ही अधिक विकल हृदयवाली अहाँक छेल हमर प्रियसखी राधिका महिलकावन से छथि । तेँ अटवय हुनका आत्मासन दिअहु । आओर—

[गीत सं०—२५]

अपख गति = अपूर्व हास्य । विगतमति = बतहि । हिमकर = चन्द्र-  
माके । निरखि = देखि । अम्बर = आकाश मे । अन्तर = मध्य मे । निशि  
दिनकर = राति मे सूर्य । परस = स्पर्श । तनु = देह मे । करपूर = कर्पू-  
रक । विपचूर = विपक चूर्ण । माखत = बसातके । भूजमश्वास = सौ-

माखत ओ रे, भूजमश्वास निरनय कर, कह संद,  
देखु कतहु अछि विषयर ॥  
कुसुमित ओ रे, उपवन निरखि चेअ कि रह, धनि कह,  
देखु लागु दव हुतवह ॥  
रस बुझ ओ रे, रस भावक जन मन दय, गुणमय,  
हर्षनाथ भन रसमय ॥

अपि च,

[गीत सं०—२६]

गुनिअ वचन गिरिधारी, सुकुमारी, तुअविनु जीवन हारी ॥  
पवन परस नहि रोचे, धृति मोचे कालियगञ्जन रोचे ॥  
चान-किरण तह कापे, तनुतापे, मन्दरगिरि कर सापे ॥  
मदन-वेदन तनु भारी, व्रजनारी, कर सुमिरन विपुरारी ॥  
अनुछन कर तुअ छ्याने, अनुमाने तेँ नहि तेजय पराने ॥  
अचिर अलिअ मधुराजे, तस काजो, करिअ यतन दय आजो ॥  
हर्षनाथ कवि गावे, मन लावे गुनिजन जानधि भावे ॥

एक श्वास बुझैत अछि । कुसुमित = फुलावल । उपवन निरखि = फुलवाड़ी  
के देखि । चेअ कि = चौकैत । दव-हुतवह = दावानल, जंगली आगि ॥

आओर,

[गीत सं०—२७]

गिरिधारी = कृष्ण । पवन-परस = हवाक स्पर्श । रोचे = सोहाइत  
छर । धृति मोचे = संयं छोड़ैत अछि । कालिय-गञ्जन रोचे = कालिय-  
नागक दुर्गतिक शोच करैत छथि जे ओ रहितथि ही एहि दुखदासी बसातके  
पीबि जेतथि । तह = ही । तनु तापे = देह तप्त । मन्दर-गिरि कर सापे = मन्द-  
राचल पर्वतके आप दैत छथि जे ओ कियेक नहि एहि दुखदासी चन्द्रमाके अनु-  
कय दैत छथि । मदन-वेदन = काम-व्यथाही । सुमिरन विपुरारी = महादेव-  
क स्मरण करैत छथि जे कामकेँ जरओने छलाह ॥ तेँ = अहाँक छ्यान कर-  
वाक कारणे ॥ अचिर = शीघ्र । यतन = प्रयास ॥



श्रीकृष्णः—(आत्मगतम्) अहो विधेः मुकुलता, यत्कृतापराधोऽप्यहमेवाभ्यर्ष-  
नीयः संवृत्तः । अहो सरलस्वभावता प्रेयस्याः ! (प्रकाशम्) सखि  
विशाखे ! भट्टिनि प्रियाश्वासनाय मल्लिकावनं गन्तव्यम् ।  
(इत्युभौ परिक्रमं नाटयतः) ।

श्रीकृष्णः—(विलोक्य सबहुमानम्) अहो मल्लिकावनशोभा ! तथाहि—  
[गीत सं०—२३]

सकल - भुवत - जनमोहन कामा ।  
उपगत ललित लता - नवरामा ॥  
कुसुमवदन तसु हास विकासा ।  
बाहु विटप, परलव कर भासा ॥  
गुच्छ पयोधर मध मरन्दा ।  
रसिक मधुपजन आनन्दकन्दा ॥  
कलविङ्की कल नूपुर राखे ।  
मधुनावलि मणिमाल सोहाखे ॥  
तनु उद्वर्तन पुष्पपरागा ।  
शिर सिन्दुर उपगत नवरामा ॥

श्रीकृष्ण—(स्वगत) अहा विधाताक अनुकूल भेनाई, जे अपराध कयलहु पर  
हमही शर्धनीय भेलहु । हाय प्रियाक कोमल स्वभाव ! (प्रकाश)  
सखी विशाखा ! भट्टदय प्रियाक आश्वासनक हेतु मल्लिकावन  
जाएव ।

(दुहु जयबाक अभिनय करै छथि)

श्रीकृष्ण—(देख बहुत आदरक संग) अहो मल्लिकावनक शोभा ! जेना कि—  
[गीत सं०—२३]

उपगत = उपस्थित । ललित-लता-नवरामा = सुन्दर ललीकरी नवीन  
सुन्दरी (नायिका) । कुसुम-वदन = फूल सौ युक्त ओहि लताक मुँह ।  
बाहु विटप = ओकर बाँहि गाछ थिक । परलव कर भासा = परलव  
हायरूप मे सोभित । गुच्छ पयोधर = फूलक गुच्छा स्तन थिकेक । मध  
मरन्दा = फूलक रस मदिरा थिकेक । रसिक मधुपजन = भौरा  
रातिक प्रेमी थिक । आनन्द-कन्दा = अतिशय आनन्ददायी ॥ कल-

कुसुम - सुगन्धि - सुवासित देहा ।  
मास्तचुम्बित नवल मिनेहा ॥  
किसलय वन्दल पुलकित वेशा ।  
कोकिलकूजित भणित विशेषा ॥  
हर्षनाथ कविशेखर भाने ।  
एकरदेखरसिंह रस जाने ॥

भवत्त्वञ्च मत्प्रेयसी भविष्यति । तथावदत्र प्रविशामि । (इति  
प्रवेशमभिनयति ।)

(ततः प्रविशति क्षिप्रोपचारव्यग्रहस्तया सख्या सममुपविष्टा  
राधा)

राधा—(संस्कृतमाश्रित्य)

ईदृशतिरेकेण मयाऽनभ्यगा

तिरस्कानश्चाट वदन्वतोऽपि ।

भाष्य तथा मे भविता यथाऽसौ

पुनः प्रसादाभिमुखो हरिः स्यात् ॥७॥

विङ्की-कल = बगरा पक्षीक स्त्रीक चनचनाएव । राखे = रख करेछ ।  
मधु-नावलि = भौराक समूह । तनु उद्वर्तन = देह मे लगयबाक उबटन ।  
नव रागा = नवीन अनुराग ॥ सुवासित = सुगन्धित । मास्त = हवा  
सौ । किसलय कन्दन = नव-लवक अंकुर सौ । पुलकित = आनन्दित ।  
कोकिल कूजित = कोइलीक कुहूँब । भणित-विशेषा = बजबाक  
विशेषता ॥

रहौ एहीठाम हमर प्रेयसी होइतीहि । तँ कनेक एहीठाम  
प्रवेश करै छी । (प्रवेशक अभिनय करै छथि ।)

[तखन ठंढाक उपचारक हेतु व्याकुल हाथवाली सखीक संग राधा  
प्रवेश करै छथि ।]

राधा—(संस्कृत भाषा मे) अजानी हम अतिशय ईर्ष्या सौ, नञ्च एणं खुशामद  
करैत प्रियके अपमानित कयल । हमर भाष्य तँ तखने ठीक होयत  
जखन श्रीकृष्ण पुनः प्रसन्न भय जयताह ॥७॥



श्रीकृष्णः—(दृष्ट्वा सहर्षं स्वगतम्) एषा मत् प्रेयसी किमपि मन्त्रयति । तस्या-  
बलतामस्तरितो भूत्वा रहस्यसम्भाषणमस्याः शृणोमि । (इति तथा  
करोति) ।

राधा—(पुनरपि 'ईर्ष्यातिरेकेण' इत्यादि पठति) ।

श्रीकृष्णः—(धृत्वा आत्मगतं) मन्त्रिमित्त एवैषोऽभिलाषः । तदुपसर्पामि ।  
(इत्युपसृत्य प्रकाशं) किमेतत्प्रलपसि ? ननु ममैव तथा भाग्यं भवि-  
तैति वक्तव्यम् (इति राधिकां करे गृह्णाति) ।

राधा—(ससंभ्रमं स्वगतं) कथं सुखं रहस्यमन्त्रणं अज्जडत्वेण ? अहो  
पमादो ! [कथं धृत्वं रहस्यमन्त्रणं आर्षपुत्रेण ? अहो प्रमादः ।]  
(इति सलज्जमधोमुखी तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—(राधाया मुखमुत्तमम्)  
स्वद्वियोगानलज्वालाप्रतप्तं निजकिङ्करम् ।  
अयि चन्द्रानने कान्ते ! सिरूच वागमृतेन माम् ॥१॥

श्रीकृष्णः—(देखि सहर्षं स्वगतं) इयेह हमर प्रेयसी किछु विचारैत छथि । तैं  
ताबत् लत्तीक अइ भय गुप्तभाषण हिनक सुनेत छी । (ताहिना  
करैत छथि) ।

राधा—(फेर 'ईर्ष्यातिरेकेण' इत्यादि श्लोक सं०—७ पढ़ैत छथि) ।

श्रीकृष्णः—(सुनि स्वगतं) हमरहि दुआरे ई प्रलाप होइत अछि त लग जाइत  
छी । (लग जाय प्रकाश) ई की प्रलाप करैत छी ? ई त हमरे  
ओहन भाग्य होअओ से कहू । (राधा क हाथ पकड़ैत छथि) ।

राधा—(हरबड़ाय स्वगतं) की सुनि गेलाह गुप्त-वातकि आर्यपुत्र ? हाथ  
रे असावधानी ! (लाजे नीचांमुहे रहैत छथि) ।

श्रीकृष्णः—(राधाक मुंह उठाय) अहाँक वियोगरूपी आगिक ज्वाला तैं सप्तपथ  
एहि अपन-सेवकस्वरूप हमरा हे चन्द्रमुखी प्रिये ! अपन वचनरूपी  
अमृत तैं सोचै ॥१॥

राधा—(स्वगतं) कथं पुष्पां तद्वा अनादरं कतुअ वाणि धरिदृष्टवअणं  
भणिदव्वा । [कथं पूर्व तथा अनादरं कृत्वा इदानीं धैर्यवचनं  
भणितव्यम्] (इति तथैव तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—

अलं विवादेन सरोरुहाक्षि !

कुतागमि प्रेयसि युक्त एव ।

कोपः कुतोऽमी विरति प्रयातु

प्रसीद मैवं भविताऽपराधः ॥१॥

राधा—मए उजेव कओ अबराहो या कथानुणओवि तुमं ण अक्कोइहो ।  
ता मरिसहु अज्जडत्तो [मयैव कुतोऽपराधः वस्तुतानुनयोऽपि  
त्वन्नावलोकितः । तन्मर्षयस्वार्थपुत्रः] (इत्यञ्जलिं बध्नाति) ।

श्रीकृष्णः—(राधामकुमारोप्य) प्रिये !

[गीत सं०—२४]

तुअ विशलेप पराभव सजनी, जे किछु उपगत भेल ।

यतनहु कहि न सकिअ तत सजनी, से सभ अब दुर गेल ॥

राधा—(स्वगतं) पहिने ओहन अनादर कय एखन कोना भौयंक वचन  
बाजू ? (ओहिना ठाडि रहैत छथि) ।

श्रीकृष्णः—हे कमल-नयने ! पश्चात्ताप जनु करी । अपराधी प्रियजन पर अहाँक  
द्वारा कयल कोष बचिते अछि । मुदा से आव समाप्त होअओ ।  
प्रसन्न होअ आव एहन अपराध नहि होयत ॥१॥

राधा—हमही अपराध कयने छी जे यत्नपूर्वक प्रार्थना कयलोपर अहाँके  
नहि देलहु । ते समा करु आर्यपुत्र । (कर जोड़ैत छथि) ।

श्रीकृष्णः—(राधाके कोर पर बैसाय) प्रिये !

[गीत सं०—२४]

तुअ विशलेप पराभव = अहाँक वियोग सँ प्राप्त दुःख । उपगत =  
उपस्थित । यतनहु = प्रयासो कयला पर । विधिवश = साम्य सँ ।



विविध आज देखल हूँ सजनी पुत परसन मुख तोर ।  
लोचन-युगल जुड़ाएल सजनी, मुख मुखचात चकोर ॥  
सङ्गओ प्रेम नहि विचलय सजनी, पक्षी होल अन्तरदूर ।  
गगन जलद लखि हरषय सजनी, कानन बसत मधुर ॥  
अइअओ विधुन प्रतिरोधक सजनी, छटप न प्रेमक लागि ।  
धरिअ मलिल सतवत्सर सजनी, रविमणि तेजय न आगि ॥  
धरिअ हृदय मम सीतल सजनी, लोचन कमल निहारि ।  
सीचिअ वचन सुधारय सजनी, निज अनुचर अवधारि ॥  
हरिपद पङ्कज मधुकर सजनी, हर्षनाथ कवि गाव ।  
एकरदेखरसिह बुझ सजनी, रसमय मन दय भाव ॥

राधा—(सहर्ष) पुनोषि वनविहारय उवकण्ठदि मे ह्रिअं । जइ  
भअवदो अनुगहेण वसन्त उदू गिअओहो पकडइसदि । [पुनरपि  
वनविहारयोक्कण्ठमे मम हृदयम् । यदि भगवतोऽनुग्रहेण वसन्त-  
ऋतुनिजवैभवम् प्रकटविष्यति ।]

पुत = फेर । परसन = प्रसन्न । लोचन-युगल = दुनू आँखि । मुख मुख-  
चात चकोर = अहाँक मुखरूपी चन्द्रमाक लेल चकोर पक्षी स्वरूप  
(आँखि) ॥ विचलय = विचलित होअय । गगन जलद लखि = आकाश  
मे मेघ देखि । कानन = वनमे । विधुन = चंगिला । प्रतिरोधक = बाधा  
कयनिहार । मलिल = पानि मे । सतवत्सर = सैंसठ्ठा वर्ष तक । रवि-  
मणि = सूर्यकान्त मणि । मम = हमर । लोचन-कमल = कमल सनक  
आँखि सँ । वचन सुधारय = वचन रही अप्रसन्न रस सँ । निज अनु-  
चर अवधारि = अपन सेवक बूझि । हरिपदपङ्कज मधुकर = कुण्डल  
चरणकमलक अमर ॥

राधा—(सहर्ष) को रो वन-विहारक लेल हमर हृदय उत्कण्ठित होइछ, जो  
भगवानक कृपा सँ वसन्त ऋतु अपन वैभव (सम्पत्ति) केँ प्रकट  
करितछि ।

श्रीकृष्णः—एवमस्तु ( इति वसन्तं स्मरति ) ।

(ततः स्मृतमात्रो वसन्तो भगवन्तं बहुमानयन् कान्तमवगाहमानो निज-  
वैभवं प्रकटीकृत्य) यथा—

[गीत सं०—२५]

नवकुन्द किशुक रश्मि चम्पक मल्लिकावलि मालती ।  
लस मधुक नीप नेवारि विकसित ललित माधलिका लती ॥  
अतिलसत चाह खगोलतिका कणिकार मोहावही ।  
दख सकुल सकहुल नागेश्वर समे जम मन भावही ॥  
पुन कोकिलाकुल मधुप काकलि कलित कानन मोहही ।  
जनि कुसुमसौरभ भार मन्वर अनिल मानस मोहही ॥  
नव मलयवात समिद्ध मनसिज दहन युवजन होमही ।  
निजलाज मान विवेक चेरज करि पुरोधस सोमही ॥

श्रीकृष्ण—एहने होअओ । (वसन्तक स्मरण करैत छथि ।)

[तखन स्मरणमात्र कयला पर वसन्त भगवानकेँ बहुत आदर  
करैत वन मे पहुँचैत अपन वैभव (ऐश्वर्य) केँ प्रकट कय देखि  
जेना—]

[गीत सं०—२६]

किशुक = पलाम । रश्मि चम्पक = सुन्दर चम्पाकुल । मल्लिकावलि  
= चेलीक पौधी । लस = शोभित होइछ । मधुक = महु । नीप = कद-  
म्ब । नेवारि = कुन्दजातिक फूल । चाह = सुन्दर । कणिकार =  
कर्नल । मधुप-काकलि = भौराक मधुर गान । कलित कानन =  
शोभित वन । कुसुम-सौरभ-भार-मन्वर-अनिल = फूलक सुगन्धिक  
भार सँ मन्द-मन्द चलैत बसात ॥ मलय-वात-समिद्ध = मलयाचलक  
वसात सँ पजरल । मनसिज-दहन = कामदेव रूपी आगि । युवजन  
होमही = युवक सभ केँ हवन करैत छथि (शोकैत छथि) । पुरोधस  
सोमही = पुरहितो चन्द्रमा करैत छथि ॥ ऋतुराज वैभव = वसन्तक



शत्रुराजवैभव परमसौभग प्रकट जग जन जानही ।  
वृषभानुनन्दिनि निरखि कानन सफल लोचन मानही ॥  
पुन करति कन्दुक केलि हविष कृष्णनेह बड़ावही ।  
कवि हर्षनाथ सनाथ जीवन मुगलपद मन भावही ॥

श्रीकृष्णः—किन्ते भूयः प्रियमुपकरोमि ?

राधा—आवोवि वरं पिअं होइ ? तहावि इदं होइ । [अतोऽपि परं प्रिय-  
म्भवति ? तथाऽपि इदम् भवतु ।] (संस्कृतभाषित्य) —

धाराधरो वर्षतु धारि काले  
वर्षास्वधर्माभिरता भवन्तु ।  
धर्माभिगुप्ता पृथ्वी नरेन्द्रः  
भूयात् सशस्पा, रमिका रमन्ताम् ॥१०॥

[ गीत सं० — २६ ]

निजनिज धरम रमओ सभ लोका  
कबहु न पावओ सज्जन लोका ॥  
धरिसओ समय सलिल जलवाहा ।  
करओ सकल जन प्रेमनिवाहा ॥

सम्पदा । सौभग = सौन्दर्य । वृषभानु-नन्दिनि = राधा । कानन =  
वनके ॥ कन्दुककेलि = गेनक खेल ॥

श्रीकृष्ण—आब अहाँक आओर प्रिय उपकार की कछ ?

राधा—एह सौ अधिक प्रिय होइत छैक ? तथापि ई होअओ । (संस्कृत मे) —  
मेघ उचित समय पर जल धरिसओ, सभ जातिक लोक अपन  
अपन धर्म पर तत्पर रहओ, पृथ्वी राजासभ सौ धर्मपूर्वक पालित भय  
धाम्य सौ पूर्ण होअओ ओ रसिक जन आनन्दित रहथु ॥१०॥

[ गीत सं० — २६ ]

निज = अपन । रमओ = प्रीति करओ । सलिल = जल । जलवाहा =

कविलभ काव्य रचओ सानन्दा ।  
करओ रसिकजन वचनविनोदा ॥  
खलजन राजसदन नहि आवे ।  
अनुछन गुणिजन संस्कृत पावे ॥  
धरणी शस्यभरलि सभकाला ।  
पालधु धरम धरणि क्षितिपाला ॥  
हर्षनाथ कवि मन दय गावे ।  
एकरदेशवरसिंह बुझ भावे ॥

श्रीकृष्णः—एवमस्तु ।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे) ॥

॥ इति पञ्चमोऽङ्कः ॥

इति श्रीहर्षनाथशर्माविरचितं माधवानन्दनाम नाटकम् ॥

मेघ । प्रेम-निवाहा = प्रेमक निर्वाह । वचन-विनोदा = वचन सौ आन  
न्दित । खलजन = दुष्टव्यक्ति । राजसदन = राजाक घर मे । संस्कृत  
= संस्कार । धरणी = पृथ्वी । शस्य = धान्य । धरम = धर्म सौ ।  
धरणि = पृथ्वीके । क्षितिपाला = राजा ॥

श्रीकृष्ण—एहने होअओ ।

[ सभ बहार भेल । ]

॥ पाँचम अङ्क समाप्त ॥

इति श्रीहर्षनाथ (ज्ञा) शर्माक बनाओल माधवानन्द  
नामक नाटक पं० श्रीशशिनाथशा विद्यावाचस्पतिकृत  
'प्रबोधिनी' मैथिलीभाषया समाप्त भेल ॥

